

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 6 अध्याय 5: नारद को शाप

14 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



लोकों में बिना विश्राम भटकने का शाप पाकर भी देवर्षि नारद क्रोध से नहीं, अपितु एक ही शब्द से उत्तर देते हैं — “बहुत अच्छा” — और सिखाते हैं कि जब कोई प्रतिकार कर सकता हो तब भी क्षमा करना ही सच्चे साधु का लक्षण है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। षष्ठ स्कन्ध का पाँचवाँ अध्याय एक ऐसी कथा कहता है जो मार्मिक और गूढ़, दोनों है। प्रजापति दक्ष, लोकों को सन्तति से भरने के लिए उत्सुक, पहले दस हजार पुत्र और फिर एक हजार और उत्पन्न करते हैं, और प्रत्येक समूह को तपस्या के लिए भेजते हैं जिससे वे सन्तान उत्पन्न करें। किन्तु

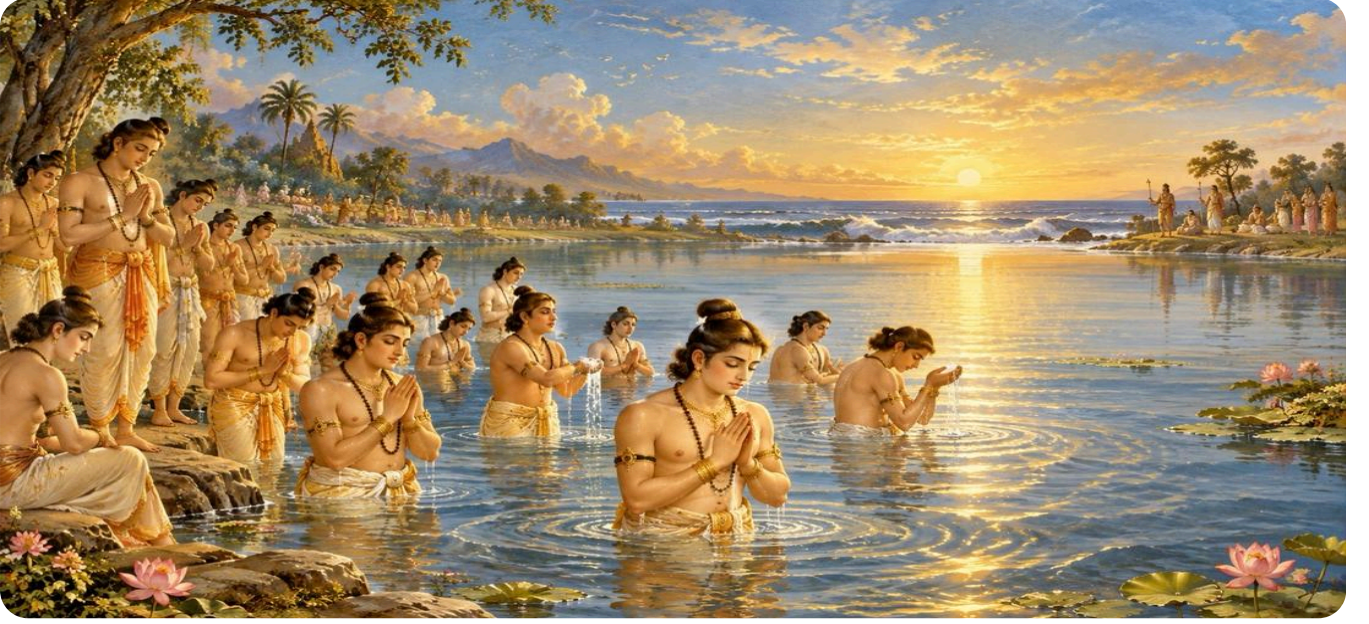
घुमक्कड़ देवर्षि नारद उनसे एक पवित्र सरोवर पर मिलते हैं और कुछ पहेलियों के द्वारा उन्हें जीवन के उच्चतर प्रयोजन के प्रति जगा देते हैं — और एक के बाद एक वे सन्तति के मार्ग को त्यागकर मुक्ति के मार्ग पर चल पड़ते हैं, फिर कभी न लौटने के लिए। दो बार पुत्र-वियोग से पीड़ित दक्ष क्रोध में नारद पर उलट पड़ते हैं और उन्हें भारी शाप देते हैं। किन्तु इस अध्याय का शिरोमणि शाप नहीं, अपितु देवर्षि का उत्तर है: एक शान्त स्वीकृति जो भगवद्भक्त आत्मा की सच्ची महिमा को प्रकट करती है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 6 (षष्ठ स्कन्ध)
- अध्याय: 5 (पञ्चम अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: प्रजापति दक्ष द्वारा नारद मुनि को शाप
- मुख्य वक्ता: श्रीशुकदेव, राजा परीक्षित को सुनाते हुए; तथा कथा के भीतर नारद मुनि, हर्यश्चगण और प्रजापति दक्ष
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित; और बाह्य कथा में नैमिषारण्य के ऋषिगण
- मुख्य स्थल: गंगा-तट जहाँ परीक्षित सुन रहे हैं; कथा के भीतर पवित्र सरोवर नारायण-सरस्, जहाँ सिन्धु नदी समुद्र से मिलती है
- केन्द्रीय विषय: नारद के ज्ञान से दक्ष के पुत्रों का रूपान्तरण, उनका मुक्ति की ओर प्रस्थान, और दक्ष का नारद को शाप
- मुख्य श्लोक-परिधि: स्कन्ध 6, अध्याय 5, श्लोक 1-44
- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

हर्यश्चगण और पवित्र सरोवर

भगवान् की ही सृजन-शक्ति से प्रेरित होकर दक्ष ने अपनी पत्नी पञ्चजनी से दस हजार पुत्र उत्पन्न किए, जो हर्यश्च कहलाए। आचरण और स्वभाव में समान, तथा पिता द्वारा सन्तति उत्पन्न करने का आदेश पाकर, वे तपस्या करने के लिए पश्चिम दिशा की ओर चल पड़े। वहाँ वे नारायण-सरस् पहुँचे — एक विशाल और पवित्र सरोवर, उस स्थान पर जहाँ सिन्धु नदी समुद्र से मिलती है, और जो ऋषियों तथा सिद्धों का आश्रय था (श्लोक 1-3)। उसके पावन जल में स्नान मात्र से उनके मन समस्त मल से शुद्ध हो गए, और उनमें परमहंसों के मार्ग की स्वाभाविक रुचि जाग उठी — यद्यपि, पिता के आदेश से बँधे होने के कारण, वे प्रजा-वृद्धि के लिए फिर भी कठोर तप में लग गए (श्लोक 4-5)।



दक्ष के दस हजार पुत्र, हर्यश्चगण, पश्चिम की ओर जाकर पवित्र सरोवर नारायण-सरस् में स्नान करते हैं, जहाँ उनके मन शुद्ध होकर वैराग्य की ओर मुड़ जाते हैं (श्लोक 1-5)।

नारद की पहेलियाँ और जागरण

हर्यश्चों को प्रजा-वृद्धि में लगा देखकर नारद उनके पास आए और उन्हें अनेक पहेलियों की शृंखला सुनाई। उन्होंने पूछा, पृथ्वी का अन्त देखे बिना तुम सचमुच सन्तति कैसे उत्पन्न करोगे? रक्षक नियुक्त होकर भी, हाय, तुम अज्ञानी हो! उन्होंने बताया — एक ऐसा देश जिसमें केवल एक ही पुरुष रहता है, एक ऐसा बिल जिसका कोई दृश्य निकास नहीं, एक ऐसी स्त्री जो अनेक रूप धारण करती है, एक ऐसा पुरुष जो वेश्या का पति है, एक ऐसी नदी जो दोनों ओर बहती है, पच्चीस उपादानों से बना एक अद्भुत घर, एक विचित्र कथा कहने वाला हंस, और कोई अत्यन्त तीक्ष्ण एवं घूमती हुई वस्तु — और पूछा कि इन्हें तथा अपने सर्वज्ञ पिता के सच्चे आदेश को समझे बिना वे सृष्टि का कार्य कैसे आगे बढ़ाएँगे (श्लोक 6-9)।

तीव्र एवं निर्मल बुद्धि से सम्पन्न हर्यश्चों ने उनके शब्दों पर विचार किया और प्रत्येक पहेली को सुलझा लिया। पृथ्वी तो सूक्ष्म शरीर रूपी वह क्षेत्र है जो चिरकाल से आत्मा को बाँधे है; उसके अन्त को देखे बिना निष्फल कर्मों से क्या लाभ? उस देश का एकमात्र शासक साक्षात् परमेश्वर हैं — जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति, तीनों अवस्थाओं के साक्षी, तुरीय, स्वाश्रित और सबसे परे।

एक एवेश्वरस्तुर्यो भगवान् स्वाश्रयः परः ।

तमदृष्ट्वाभवं पुंसः किमसत्कर्मभिर्भवेत् ॥ १२ ॥

eka eveśvaras turyo bhagavān svāśrayaḥ paraḥ tam adṛṣṭvābhavaṁ puṁsaḥ kim asat-karmabhir bhavet

अर्थ: एकमात्र भगवान् ही परम नियन्ता हैं, तुरीय, स्वाश्रित और सबसे परे। जन्म से सर्वथा रहित उन भगवान् को देखे बिना मनुष्य निष्फल कर्मों से क्या प्राप्त कर सकता है? (स्कन्ध 6, अध्याय 5, श्लोक 12)

इसी प्रकार उन्होंने शेष पहेलियाँ भी सुलझाई। अनेक मोहक रूप धारण करने वाली स्त्री तीन गुणों से रंगी हुई चंचल बुद्धि है; उसका अयोग्य पति वह जीव है जो उससे तादात्म्य कर लेता है। दोनों ओर बहने वाली नदी माया है, जो सृष्टि और प्रलय दोनों लाती है और साधना के तटों के समीप ही उग्र हो उठती है। पच्चीस उपादानों का अद्भुत घर यह शरीर है, और उसका अन्तर्यामी पुरुष उसके समस्त कारण-कार्यों का अद्भुत दर्पण है। हंस वह विवेक है जो जल से दूध के समान पदार्थ से आत्मा को पृथक् करता है; तीक्ष्ण, धूमती, स्वतन्त्र वस्तु काल का चक्र है जो समस्त सृष्टि को निगल जाता है; और दूसरा पिता शास्त्र है, जिसके उपदेश मनुष्य को केवल सांसारिक कर्म से विमुक्त करते हैं। इस प्रकार निश्चय कर, एकमत होकर हर्यश्चों ने नारद की श्रद्धापूर्वक प्रदक्षिणा की और उस भगवत्-प्राप्ति के मार्ग को ग्रहण किया जहाँ से कोई नहीं लौटता। अपना मन भगवान् विष्णु के चरण-कमलों में स्थिर किए नारद अपने मार्ग पर लोकों में विचरण करते चले गए (श्लोक 10-22)।



देवर्षि नारद, वीणा हाथ में लिए, पवित्र सरोवर के तट पर हर्यश्चों को अपनी गूढ़ पहेलियाँ सुनाते हैं और उन्हें जीवन के परम लक्ष्य के प्रति जगा देते हैं (श्लोक 6-22)।

शबलाश्वगण और पवित्र मन्त्र

यह सुनकर कि उनके सदाचारी पुत्र नारद के वचन से सांसारिक जीवन से विमुक्त हो गए, दक्ष शोक से अभिभूत हो गए — क्योंकि सचमुच सुयोग्य सन्तान का होना भी दुःख का कारण बन जाता है जब वे टिकें ही नहीं। ब्रह्मा से सान्त्वना पाकर उन्होंने पञ्चजनी से एक हजार और पुत्र उत्पन्न किए, जो शबलाश्व कहलाए, और उन्हें पुनः सन्तति उत्पन्न करने का आदेश दिया (श्लोक 23-24)। उन्होंने भी तप का दृढ़ संकल्प किया और नारायण-सरस् गए, जहाँ उनके बड़े भाइयों ने अपना लक्ष्य पाया था। उस सरोवर के जल से मन शुद्ध कर उन्होंने वहाँ महान् तप किया, ओंकार का कोमलता से जप करते हुए। कई मास केवल जल पर और फिर केवल वायु पर रहकर उन्होंने एक पवित्र मन्त्र का जप करते हुए भगवान् विष्णु की आराधना की (श्लोक 25-27)।

ॐ नमो नारायणाय पुरुषाय महात्मने ।

विशुद्धसत्त्वधिष्याय महाहंसाय धीमहि ॥ २८ ॥

om namo nārāyaṇāya puruṣāya mahātmane viśuddha-sattva-dhiṣṇyāya mahā-haṁsāya dhīmahī

अर्थ: ॐ। हम भगवान् नारायण को नमस्कार करते हैं, जो परम पुरुष, महान् आत्मा, और जिनका धाम विशुद्ध, रजस्-तमस् से रहित सत्त्व है — उस महान् दिव्य हंस का हम ध्यान करते हैं। (स्कन्ध 6, अध्याय 5, श्लोक 28)



शबलाश्वगण, दक्ष के एक हजार छोटे पुत्र, पवित्र सरोवर पर भगवान् विष्णु की आराधना करते हैं, ओंकार तथा भगवान् नारायण की स्तुति का जप करते हुए (श्लोक 25-28)।

नारद इन राजकुमारों के पास भी आए और उन्हें वैसे ही वचन कहे जैसे उन्होंने उनके बड़े भाइयों को कहे थे। उन्होंने कहा, उन भाइयों द्वारा चले हुए मार्ग को खोजो जिनसे तुम इतना स्नेह रखते हो; जो भाई अपना कर्तव्य जानता है और उनके उन्नत मार्ग का अनुसरण करता है, अपने पुण्य के साथ, वह मरुद्गणों के साथ आनन्दित होता है। इतना कहकर वह देवर्षि — जिनका दर्शन कभी निष्फल नहीं होता — चले गए, और वे भी अपने भाइयों के मार्ग पर चल पड़े, और बीती हुई रातों के समान आज तक नहीं लौटे (श्लोक 29-33)।

दक्ष का शोक और शाप

अनेक अपशकुन देखकर और यह जानकर कि उनके पुत्र फिर नारद के द्वारा उनसे छिन गए, दक्ष शोक से अभिभूत हो गए। जब वे उस देवर्षि से मिले, उनके ओष्ठ क्रोध से काँप रहे थे, और उन्होंने कटु वचनों से उनकी भर्त्सना की। साधु के वेश में, दक्ष ने कहा, तुमने हमारे सदाचारी युवकों का अहित किया है, उन्हें उनके ऋणों से उन्मूलन होने और सांसारिक कर्म से विरक्त होने से पहले ही संन्यास का मार्ग दिखाकर। तुमने भगवान् के यश को कलंकित किया है, उन्होंने आरोप लगाया, फिर भी तुम उनके पार्षदों में विचरण करते हो; भगवान् के सच्चे भक्त तो सदा सब प्राणियों पर कृपा करने को उत्सुक रहते हैं, किन्तु तुमने ही हम पर, जो शत्रु नहीं थे, शत्रुता दिखाई। दक्ष ने तर्क किया कि मनुष्य इन्द्रिय-सुखों का कटु परिणाम उन्हें भोगे बिना नहीं जान सकता, और दूसरे के द्वारा थोपा गया वैराग्य जड़ नहीं पकड़ता। हमने तुम्हारे प्रथम अपराध को क्षमा कर दिया, उन्होंने कहा; किन्तु क्योंकि तुमने दूसरी बार हमारा अहित किया है, हमारे वंश की परम्परा को तोड़कर, अतः लोकों में भटकते हुए तुम्हें कहीं भी स्थान न मिलेगा (श्लोक 34-43)।

तन्तुकृन्तन यन्नस्त्वमभद्रमचरः पुनः ।

तस्माल्लोकेषु ते मूढ न भवेद्भ्रमतः पदम् ॥ ४३ ॥

*tantu-kṛntana yan nas tvam abhadram acarāḥ punaḥ tasmāl lokeṣu te mūḍha na bhaved
bhramataḥ padam*

अर्थ: हे हमारे वंश-सूत्र को काटने वाले, क्योंकि तुमने दूसरी बार हमारा यह अहित किया है, अतः हे मूढ़, लोकों में भटकते हुए तुम्हें कहीं भी स्थिर स्थान न मिलेगा। (स्कन्ध 6, अध्याय 5, श्लोक 43)



अपने खोए पुत्रों के शोक से अभिभूत प्रजापति दक्ष, क्रोध से काँपते ओष्ठों के साथ, देवर्षि नारद को शाप देते हैं (श्लोक 34-43)।

दक्ष के क्रोध के मूल में एक ऐसा तर्क छिपा है जिसे वैष्णव आचार्य गम्भीरता से लेते हैं: उनका कहना है कि उनके पुत्र अभी ऋषियों, देवताओं और स्वयं पिता के ऋणों से उद्धरण नहीं हुए थे — तो उन्हें यँ चले जाने का क्या अधिकार था (श्लोक 36-37)? भागवत का अपना उत्तर नारद के आचरण में ही निहित है: ऐसे ऋण मोहग्रस्त जीव के ऋण हैं, और जो आत्मा भगवान् के प्रति पूर्ण समर्पित हो चुकी है, वह पहले से ही इन सबसे परे खड़ी है; हर्यश्च और शबलाश्च किसी कर्तव्य से भाग नहीं रहे थे, अपितु उस एकमात्र शरण तक पहुँच चुके थे जो समस्त कर्तव्यों से परे है। नारद दक्ष से इस पर तर्क करने नहीं रुकते। वे इसे केवल जीते हैं — बिना आत्म-रक्षा किए मौन होकर शाप स्वीकार करते हुए — अपनी निर्विवाद सहनशीलता को ही उस बहस का उत्तर बनने देते हैं जिसे शब्दों से कभी सुलझाया न जा सकता था (श्लोक 36-44)।

एक साधु की शान्ति

आगे जो आता है, वह इस अध्याय का शान्त शिखर है। साधुओं द्वारा भी सम्मानित नारद ने बिना किसी विरोध के शाप को स्वीकार कर लिया, केवल इतना कहकर, “बहुत अच्छा।” यद्यपि वे प्रतिशाप देकर प्रतिकार करने में पूर्णतः सक्षम थे, उन्होंने उस अन्याय को सह लेना चुना — और भागवत हमें बताता है कि यही सहनशीलता आत्मा को सच्चा साधु कहलाने का अधिकार देती है।

श्रीशुक उवाच

प्रतिजग्राह तद्वाढं नारदः साधुसम्मतः ।

एतावान्साधुवादो हि तितिक्षेतेश्वरः स्वयम् ॥ ४४ ॥

śrī-śuka uvāca pratijagrāha tad bāḍhaṁ nāradaḥ sādhu-sammataḥ etāvān sādhu-vādo hi titikṣeteśvaraḥ svayam

अर्थ: श्रीशुकदेव ने कहा: साधुओं द्वारा सम्मानित नारद ने “ऐसा ही हो” कहकर उस शाप को पूर्णतः स्वीकार कर लिया। जो स्वयं समर्थ हो, वह दूसरे के अपराध को सह ले — यही सच्चे साधु का लक्षण है। (स्कन्ध 6, अध्याय 5, श्लोक 44)

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. पवित्रता का एक स्पर्श सम्पूर्ण जीवन को मोड़ सकता है। नारायण-सरस् का जल और नारद के कुछ वचन ही दक्ष के पुत्रों को परम लक्ष्य के प्रति जगाने के लिए पर्याप्त थे, जो यह दिखाता है कि सत्संग और तीर्थ किसी ग्रहणशील हृदय पर कितनी प्रबलता से कार्य करते हैं (श्लोक 4, 10-21)।
2. नारद की पहेलियाँ विवेक सिखाती हैं। उनकी लीलामय सतह के पीछे आध्यात्मिक जीवन का सम्पूर्ण मानचित्र छिपा है — आत्मा, प्रकृति के गुण, माया, काल, शास्त्र, और सबसे बढ़कर वह एक परमेश्वर जिन्हें अवश्य जानना है (श्लोक 6-20)।
3. भगवान् ही समस्त प्रयास के योग्य एकमात्र लक्ष्य हैं। हर्यश्च निष्कर्ष निकालते हैं कि जन्म से रहित, स्वाश्रित परमेश्वर को देखे बिना निष्फल कर्म व्यर्थ हैं (श्लोक 12)।
4. नारायण का नाम और रूप ही आराधना का सार है। शबलाश्रों का ओंकार तथा नारायण की स्तुति द्वारा विशुद्ध, दिव्य भगवान् का ध्यान सरल, एकनिष्ठ भक्ति का आदर्श प्रस्तुत करता है (श्लोक 28)।
5. सहनशीलता ही साधुता का सच्चा मापदण्ड है। निर्दोष होकर भी अन्याय और शाप पाए नारद न प्रतिकार करते हैं न शिकायत, यह सिखाते हुए कि जो प्रतिकार कर सकता हो उसकी सहनशीलता ही भगवद्भक्त का सर्वोत्तम चिह्न है (श्लोक 44)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

यह अध्याय दो अत्यन्त मानवीय दुःखों को साथ-साथ रखता है — पुत्रों को खोने का पिता का शोक, और एक निर्दोष साधु का अनुचित दण्ड — और दोनों से पार जाने का मार्ग शान्ति से दिखाता है। दक्ष की पीड़ा वास्तविक है और उनका क्रोध समझ में आता है, फिर भी वह उन्हें उसी देवर्षि को शाप देने की ओर ले जाता है जिनके स्पर्श ने उनके पुत्रों को मुक्ति तक उठा दिया। नारद, जिन्होंने उन युवकों को कल्पनातीत महानतम उपहार दिया, बदले में केवल दोष पाते हैं; और उनका उत्तर स्वीकृति का एक ही, अविचल शब्द है। उस “बहुत अच्छा” में एक सम्पूर्ण आध्यात्मिक साधना छिपी है। जब हमारे साथ कोमलता का व्यवहार हो तो कोमल होना सरल है; हमारी भक्ति की परीक्षा तब आती है जब हमारे साथ अन्याय हो, और हम अन्याय का उत्तर अन्याय से दे सकते हों, फिर भी क्षमा करना चुनें। नारद इसलिए शान्त रह सकते हैं क्योंकि उनका मन पहले से ही भगवान् के चरण-कमलों में स्थिर है; भटकते लोकों में जो कुछ घटे, वह उस शान्ति को स्पर्श नहीं कर सकता जो उन्होंने वहाँ पाई है। बिना विश्राम भटकने का शाप ऐसी आत्मा के लिए केवल एक विस्तृत क्षेत्र बन जाता है जिसमें वे भगवान् के यश का गान करें। जो संसार को दण्ड-सा दिखता है, वह भक्त के लिए केवल उस तीर्थयात्रा का और अधिक है जिससे वह पहले से ही प्रेम करता है।

एक दैनिक भक्ते-अभ्यास

आज नारद के “बहुत अच्छा” को अपना अभ्यास बनाएँ। जब कोई आपसे अनुचित बोले, या किसी भले कार्य के लिए आप पर दोष लगाए, तो प्रतिरक्षा या प्रतिकार की पहली प्रेरणा को रोकें। रुकें, श्वास लें, और उस क्षण को भीतर ही भगवान् को अर्पित करें, उनके नाम का शान्त जप करते हुए। दिन के जिन छोटे अपमानों को आप सामान्यतः मन में पालते, उन्हें उस सहनशीलता के अभ्यास का अवसर बनने दें जिसे भागवत साधु का लक्षण कहता है। एक बार भी प्रतिकार के बजाय धैर्य चुनकर, आप छोटे रूप में ही सही, उसी मार्ग पर चलते हैं जिस पर वह महान् देवर्षि चले।

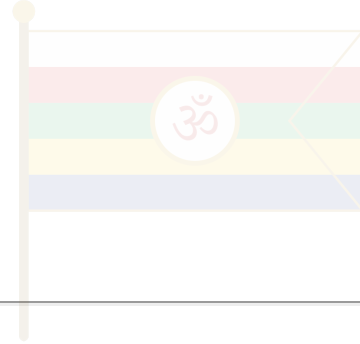
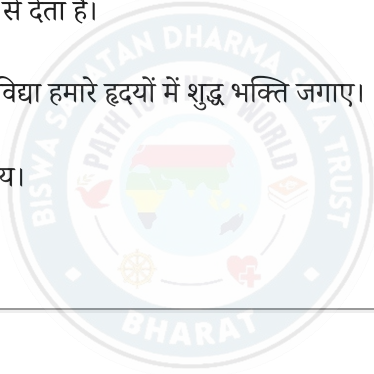
उपसंहार

षष्ठ स्कन्ध का पाँचवाँ अध्याय दक्ष के पुत्रों के जागरण, सत्संग की शक्ति, और नारद के परम धैर्य को एक साथ बुनता है। देवर्षि की पहेलियों के द्वारा हर्यश्च और शबलाश्च यह जान लेते हैं कि एक परमेश्वर ही समस्त प्रयास का लक्ष्य हैं, और वे मुक्ति की ओर प्रस्थान कर जाते हैं, फिर कभी न लौटने के लिए। दक्ष के शोक और शाप के द्वारा हम आसक्ति के दुःख की झलक पाते हैं; और नारद की शान्त स्वीकृति के द्वारा हम जानते हैं कि सच्ची साधुता शक्ति में नहीं, अपितु सहनशीलता में सबसे उज्ज्वल चमकती है। जैसे-जैसे यह स्कन्ध दक्ष की कन्याओं की विशाल सन्तति की ओर बढ़ता है, हम उस देवर्षि की शान्त शिक्षा साथ ले चलते हैं: कि भगवान् में स्थिर हृदय भाग्य के प्रत्येक मोड़ से अविचल रहता है, और शाप का उत्तर भी शान्ति से देता है।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य विद्या हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।



संदर्भ तथा साभार

- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), षष्ठ स्कन्ध, पञ्चम प्रवचन।
- शृंखला: Srimad Bhagavatam Wisdom · Biswa Sanatan Dharma Seva Trust।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा का अनुसरण करते हुए प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक द्वारा संबद्धता या समर्थन का कोई अभिप्राय नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-6-chapter-5-narada-cursed-by-daksha-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञानम् • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

